International Journal of Humanities and Social Science Invention
ISSN (Online): 2319 – 7722, ISSN (Print): 2319 – 7714
www.ijhssi.org Volume 2 Issue 6 ǁ June. 2013ǁ PP.114-122

समाज कार्य – इतिहास, दर्शन एवं प्रणालियां

डा. लता व्यास
व्याख्याता
चौधरी बल्लू राम गोदारा राजकीय कन्या महाविद्यालय श्री गंगानगर

प्रत्येक समाज एवं प्रत्येक युग में दुर्बल, निर्धन, निराश्रयी व्यक्ति रहे है। प्रत्येक समाज अपने समाज अपने कमजोर सदस्यों की किसी न किसी रूप में सहायता में सहायता करता आया है।

मानव सभ्यता के प्रारम्भ से ही मनुष्य ने पारस्परिक रक्षा एवं सहयोग की आवश्यकता का अनुभव किया है। संसार के सभी धर्मों ने निर्धनों, निराश्रितों, असमर्थों एवं विकलांगों की सहायता का उपदेश दिया है। प्रत्येक एवं विकलांगों की सहायता का उपदेश दिया है। प्रत्येक संस्कृति में अभावग्रस्त दरिद्र एवं निराश्रित व्यक्तियोंकी सहायता का प्रबन्ध रहा है।

यदि हम समाज कार्य के इतिहास को देखे तो ज्ञात होगा कि समाजकार्य मानवता का यह रूप है जो निरन्तर एक वैज्ञानिक प्रणाली की खोज में रहा है जिसके द्वारा सहायता के कार्य को अधिक से अधिक नियमित और वैज्ञानिक रूप दिया जा सके।

अन्य स्थानों के समान योरप में भी समाज कार्य को धार्मिक भावनाओं से ही प्रेरणा मिली और धार्मिक संस्थाओं ने प्राचीन समय के धार्मिक नेताओं ने दान वितरण के कार्य को अत्याधिक महत्त्व दिया। ऐसी परिस्थिति में धार्मिक भिक्षावृत्ति का अधिक प्रचलन हो जाना स्वाभाविक था क्योंकि भिक्षा द्वारा जीवन निर्वाह करना सरल था और धार्मिक भिक्षावृत्ति आदर की दृष्टिसे देखी जाती थी।

आदिकाल से ही धर्म गुरूओं, प्रचारकों तथा अनुयायियों ने दिन दुखियों की सहायता करने का उत्तरदायित्व प्रदान किया। इन लोगों ने धार्मिक भावनाओं ईश्वर की कृपा प्राप्त करने की इच्छाने सहायता एवं दान को प्रोत्साहन दिया। परस्पर सहायता प्रदान करने की भावना का होना ईसाई धर्म में आज्ञा के रूप में माना जाता था। 1520 में जर्मनी में मार्टिन लूथर ने भिक्षावृत्ति को रोकने तथा सभी पैरिसों में दिन दुखियों की सहायता हेतु भोजन, वस्त्र इत्यादि प्रदान करने के लिए दान पेटी स्थापना किए जाने की अपील की।

किन्तु वैज्ञानिक क्रान्ति के प्रभाव स्वरूप मनुष्य के मानसिक तथा भौतिक जगत् का विस्तार हुआ एवं निर्धन सहायता तथा भौतिक जगत् का विस्तार हुआ एवं निर्धन सहायता की यह प्रणाली अधिक काल तक न चल सकी। उत्पादन के वैज्ञानिकरण तथा महत्वकालीन सामन्तवाद के विघटन से हजारों व्यक्ति रोजगार की तलाश में घूमने लगे। इस स्थिति का समान करने के लिए इंग्लैण्ड में कानून का साहारा लिया गया। 1556 में संसद द्वारा एक अधिनियम पारित हुआ जिसके अनुसार प्रत्येक रविवार को गिरजाधरों द्वारा बीमार गरीबों की सहायता के लिए धन का संग्रह किया जाने लगा। इसके साथ–साथ स्वस्थ व्यक्तियों के लिए भीख माँगना वर्जित कर दिया गया। 1547 में पारित एक अधिनियम के अनुसार स्वस्थ भिखमंगों के शरीर में ट चिन्ह गुदवाने की व्यवस्था कर दी गई। परंतु इस प्रकार के अधिनियम समस्या को हल करने के बजाय समस्या को दबाने के दृष्टिगत से पारित हुए थे।

1576 में सुधारगृह स्थापित किए गए जिनमें पटसन, पटुआ लोहा एकत्रित किया जाता था एवं स्वस्थ शरीर वाले निर्धनों, विशेष रूप से युवकों को कार्य करने के लिए बाध्य किया जाता था। निर्धनों के लिए 1601 में एलिजाबेथ का निर्धन कानून (Elizabethan Poor Law) बनाया गया जिसे "43–। एलिजाबेथ" के नाम से जाना जाता हैा इस कानून के प्रमुख प्रावधान निम्नलिखित हैं–

1. किसी भी ऐसे व्यक्ति का पंजीकरण न किया जाए जिसके सम्बंधी, पति अथवा पत्नी, पिता अथवा पुत्र सहायता कर सकने की स्थिति में हों।
2. निर्धन कानून के अन्तर्गत 3 प्रकार के निर्धनों को सहायता प्रदान करने की व्यवस्था की गयी।
   - स्वस्थ शरीर वाले निर्धन।
   - शक्तिहीन निर्धन।
   - आश्रित बच्चे।
3. यदि बच्चे अपने निर्धन माता–पिता या सम्बंधियों के साथ रह सकें तो उन्हें उत्पादन के लिए आवश्यक ऐसी वस्तुएँ प्रदान की जाएँ जिनसे वे घेरलू उद्योग गृहों में रखा जाए।

4. निर्धन सहायता हेतु वित्तीय व्यवस्था करने के लिए निर्धन कर लगाकर एक कोष स्थापित किया गया था जिसमें निजी दान, कानून का उल्लंघन करने पर किए गए जुर्माने इत्यादि से प्राप्त धनराशि जमा की जाती थी।
5. निर्धनों के ओवरसियर इस निर्धन कानून को लागू करने एवं उसका प्रशासन सम्बंधी कार्य करते थे। इनकी नियुक्ति शान्ति के न्यायाधीस या मैजिस्ट्रेट द्वारा की जाती थी। इन अधिकारियों का कार्य निर्धनों से सहायता के लिए प्रार्थना पत्र लेना उनकी सामाजिक दशाओं का पता लगाना एवं किस प्रकार की सहायता दी जाए इससे सम्बंधित सभी निर्णय लेना था।

इंग्लैण्ड में आधुनिक सामाजिक सुरक्षा

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद कल्याण क्षेत्र में कई नए कानून पारित हुए–

बेवरिज रिपोर्ट

1941 में इंग्लैण्ड ने अपने सम्पूर्ण समाज कल्याणकारी कार्यक्रमों में सुधार करना प्रारंभ किया एवं लार्ड विलियम बेवरिज की अध्यक्षता में एक सामाजिक बीमा एवं सम्बन्धित सेवाओं पर अन्तर्विभागीय आयोग गठित किया। इस आयोग की रिपोर्ट में 5 कार्यक्रमों पर आधारित सामाजिक सुरक्षाकी एक व्यापक योजना प्रस्तुत की गयी।

- सामाजिक बीमा।
- जन सहायता।
- बच्चों के भत्ते।
- व्यापक निरूशुल्क स्वास्थ्य एवं पुनर्वास सेवाएँ एवं
- पूर्ण रोजगार का अनुरक्षण।

– इस रिपोर्ट के आधार पर 1944 में अपंग व्यक्ति कानून (Disabled PersonsAct) बना जिसके अधीन वाणिज्य तथा औद्योगिक प्रतिष्ठानों के लिए यह आवश्यक कर दिया गया कि वे अंपगों को रोजगार दे।

– 1944 में ही पेंशन एवं राष्ट्रीय बीमा मंत्रालय का गठन किया गया एवं इसके अधीन एक राष्ट्रीय सहायता परिषद बनायी गयीजो सहायता प्रदान करने के लिए उत्तरदायी थी।

– 1945 में परिवार भत्ता कानून पास किया गया।

– 1948 में राष्ट्रीय बीमा कानून बनाया गया जिसके अधीन स्वास्थ्य अपंगता एवं वृद्धावस्था बीमा इत्यादि योजनाएँ बनायी गयी। इस प्रकार –

सामाजिक सुरक्षा के सभी अधिनियमों में समय–समय पर संशोधन करके सामाजिक सुरक्षा के कार्यक्रमों में कई बार उचित परिवर्तन किए गए है। Social Security Benefit Act 1975 ने इंग्लैड़ की जनता के लिए एक व्यापक सामाजिक सुरक्षा का कार्यक्रम निर्मित किया है।

वर्तमान समय में राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा, समाज सेवाएँ तथा सामाजिक सुरक्षा इंग्लैड में पाई जाने वाली समाज कल्याण व्यवस्था के प्रमुख अंग है। राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा के अंतर्गत सभी नागरिकों को उनकी आय पर ध्यान दिए बिना व्यापक रूप से चिकित्सकीय सेवायें प्रदान की जा रही है। सामाजिक सुरक्षा व्यवस्था वित्तिय आवश्यकता रखने वाले व्यक्तियों को एक मूलभूत जीवन स्तर का आश्वासन प्रदान करती हैं एवं इसके लिए इस व्यवस्था के अधीन रोजी–रोटी कमाने में असमर्थता की अवधि में आय प्रदान की जाती है तथा परिवारों को सहायता दी जाती है एवं असमर्थता के कारण होने वाले अतिरिक्त व्यय वहन करने के लिए सहायता प्रदान की जाती है।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा का दायित्व केन्द्र सरकार द्वारा प्रत्यक्ष रूप से ग्रहण किया जाता है। यह सहायता इसके एजेण्टों के रूप में कार्य करने वाले स्वास्थ्य प्राधिकरणों एवं बोर्डो द्वारा दी जाती है। केन्द्र सरकार सामाजिक सुरक्षाके लिए भी प्रत्यक्ष रूप से उत्तरदायी है।

उन्होंने निम्नलिखित प्रक्रम का सुझाव दिया–

- दरिद्रता की प्रत्येक घटना की सावधानी से जाँच की जाय, यह ज्ञात किया जाय कि, निराश्रिता का क्या कारण है और निर्धनों को आत्मावम्बन की संभावना को विकसित किया जाय।
- यदि स्वावलंबन सभव न हो तो सम्बन्धियों, मित्रों तथा पड़ोसियों को उत्साहित किया जाय कि वे अनाथों, वृद्धों, रोगियो तथा असमर्थों को आश्रय दें।

- यदि परिवार की आवश्यकताएँ इस प्रकार पूरी न हो तो कुछ ऐसे धनी नागरिक ढूढें जाएँ जो उनका भरण–पोषण कर सकें।
- यदि इनमें से कोई उपाय सफल न हो तभी जिले का डीकन अपनी धार्मिक परिषद से सहायता की प्रार्थना करे।

चामर्स की वैयक्तिक एवं पादरी प्रादेशिक दान की अवधारणा दान के क्षेत्र में एक महत्त्वपूर्ण योगदान थी। उन्होंने प्रत्येक घटना में वैयक्तिक आधार पर जाँच करने और दरिद्रता के कारणों को ज्ञात करने का प्रयत्न करने के सिद्धान्त को विकसित किया। उनके विचार में निर्धनता का कारण व्यक्ति की अज्ञानता एवं दूरदर्शिता का अभाव था। उन्होंने अन्य सामाजिक तथा आर्थिक कारणों की अवहेलना की जो व्यक्ति की शक्ति से बाहर होते हैं। फिर भी उनकी यह धारणा कि निराश्रितों के कल्याण पर वैयक्तित रूप से ध्यान देना चाहिये सहायता के कार्य की उन्नति में सहायक हुई। चामर्स के देहान्त के पश्चात् कुछ समय तक उनकी योजना कार्यान्वित न हो सकी परन्तु 1809 में लन्दन चौरिटी आर्गनाईजेशन सोसायटी उन्हीं के विचारों के आधार पर स्थापित हुई।

अमेरिका में समाज कार्य का इतिहास

अमेरिका में समाज कार्य के विकास का इतिहास इंग्लैड जैसा ही था। 20 वीं शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षों तक समाज कार्य का विकास वैसा ही रहा परन्तु इसके बाद 1935 तक समाज कार्य के क्रियाकलायों मे थोड़े बहुत परिवर्तन देखने में आते हैं। अमेरिका के निवासी मुक्त उद्यम पद्धति में विश्वास रखते थे इसलिए किसी भी प्रयास को जो इस सिद्धान्त से मेल नहीं खाता नहीं मानते थे।

सत्रहवीं शताब्दी को आरम्भ से यूरोप में व्यक्तियों की एक बड़ी संस्था ने अमेरिका में प्रवेश क्रिया और वहाँ एक नवीन बस्ती संस्था की स्थापना की। अमेरिका की प्राचीन बस्तियों की संस्कृति यूरोप की प्राचीन सभ्यता और संस्कृति पर आधारित थी। यहाँ के राजनैतिक स्वरूपों आर्थिक, क्रियाओं, सामाजिक प्रथाओं रूढियों और धार्मिक दृष्टिकोण के निर्माण में यूरोप की परिस्थिति का महत्वपूर्ण स्थान हैं।

समाज कार्य के क्षेत्र में भी उपयोग की बस्तियों ने यूरोप और विशेषकर इंग्लैड का अनुसरण किया। अमेरिका के ऐच्छिक एवं राजकीय समाजकार्य का आधार बहुत कुछ उन विचारों एवं व्यवहारों पर है जिनका जन्म और विकास इंग्लैड में हुआ।समाज कल्याण पर इग्लैड का प्रमुख प्रभाव यह पड़ा कि इंग्लैण्ड के समान अमेरिका में भी ऐच्छिक दान (प्राइवेट चौरिटी) पर बल दिया जाने लगा। आरम्भ में अमेरिका में भी राज्य का कार्य केवल संरक्षण करना ही समझा जाता था।

आवश्यकताग्रस्त लोगों के साथ काम करने एवं रहने का काल

आरंभिक काल में अमेरिका आने वाले अप्रवासियों की स्थिति सोचनीय थी। ये अप्रवासी विभिन्न वंशों एवं पृष्ठभूमियां के थे एवं भाषाएँ भिन्न–भिन्न बोलते थे। इसमें पारस्परिक मेल–जोल नगण्य था। पारस्परिक मेल–जोल बढ़ाने के लिए चार्ल्स बी.स्टोवर ने नेबरहुड गिल्ड ऑफ न्यूयार्क सिटी की 1887 में स्थापना की, जिसे आज यूनिवर्सिटी सेटिलमेंट हाउस के नाम से जाना जाता है। कालान्तर 1889 में जेन ऐडम्स के संरक्षण में हाल्स्टेड स्ट्रीट में एक हल हाउस की स्थापना की।

कल्याण सेवाओं का संगठन

अमेरिका में समाज कार्य के प्रसार की दृष्टि से 1917 से लेकर 1920 की अवधि महत्त्वपूर्ण है। इस समय विभिन्न राज्यों द्वारा कल्याण सेवाओं के संगठनों का एक राज्यव्यापी प्रणाली के रूप में समन्वय करने के प्रयास किए गए एवं अंततरू राज्यों में गवर्नर द्वारा कल्याण विभागों तथा सलाहकार बोर्डो की नियुक्ति की गई। कुछ राज्यों में बोर्ड की स्थापना की गई जिसका कार्य कला कल्याण कार्यों के संगठन के लिए प्रशासक का चुनाव करना होता था।

संघीय सहायता एवं अनुदान

जन कल्याण के संघीय कार्यक्रमों को प्रभावित करने में, संघीय सहायता तथा अनुदान का प्रसार एक मुख्य कारण है। यह अनुदान प्रारम्भ में राज्यों को भूमि के रूप में दी जाती थी। भूमि बिक्री से जो धन प्राप्त होता था उसे संघीय कार्यक्रमों में व्यय किया जाता था। ये कार्यक्रम विकलांग बच्चों के व्यवस्थापन, लड़कियों की शिक्षा तथा असमर्थ व्यक्तियों की सहायता से सम्बंधित थेरू परन्तु बाद में यह अनुदान धनराशि के रूप में दिया जाने लगा। 1920 के बाद संघीय सरकार द्वारा अनुदान प्राप्त जन–कल्याण के कार्यों की संख्या को बढ़ा दिया गया।

सामाजिक सुरक्षा अधिनियम 1935

बेरोजगारी, बीमारी, असमर्थता, मातृत्व तथा बाल–समास्याओं के समाधान के लिए एक स्थायी व्यवस्था का होना आवश्यक था। परिणामस्वरूप 14 अगस्त 1935 में सामाजिक सुरक्षा अधिनियम पारित किया गया। इसके अन्तर्गत सामाजिक बीमा, सामाजिक सहायता, स्वास्थ्य, महिला तथा बाल कल्याण के लिए व्यवस्था की गयी।

सामाजिक सुरक्षा की योजनाओंके अनुसार वृद्धावस्था, अवकाश प्राप्त 65 वर्ष की आयु के बाद काम से अवकाश ग्रहण करने पर प्रदान किया जाता है। इसके अतिरिक्त यदि पत्नी तथा पति की आयु 62 वर्ष से अधिक होती है तो 18 वर्ष से कम आयु के बच्चों को भी यह लाभ दिया जाता है।

बेरोजगारी, चिकित्सा की समस्या को हल करने के लिए विभिन्न प्रकार की सुविधाओं की व्यवस्था की है। इस प्रकार अमेरिका में प्रत्येक नागरिक को विपत्ति के समय सहायता प्राप्त करने की पूर्ण व्यवस्था है।

कतिपय अन्य समाज कार्य के विकास

A- Civil Conservation Corps C 3

1933 में यह कानून पारित किया गया। इस कानून के अन्तर्गत 17 एवं 25 वर्ष की आयु वाले युवकों को जिन्हें नौकरी की आवश्यकता हो एवं जो स्कूल न जा रहा हो उसे C 3 शिविरों में भर्ती होने की सुविधा दी जाने लगी। इसके अतिरिक्त भूतपूर्व अवकाश प्राप्त सैनिक एवं त्मक प्दकपंदे इन शिविरों में भर्ती हो सकते थे। इन शिविरवासियों को मासिक वेतन दिया जाता था जिसका कुछ अंश उनके परिवारों को भेज दिया जाता था। 1942 में इसे भी समाप्त कर दिया गया।

National YouthAdministration

यह एक दूसरा कार्यक्रम था जिसे 1935 में दो उद्देश्यों को सामने रखकर चलाया गया था।

- अपनी शिक्षा को चालू रखने के लिए, आर्थिक सहायता देकर, च्तज–जपउम नौकरी देकर। सहायतार्थी स्कूल, कालेज एवं स्नातक छात्रों की सहायता।
- 18–25 वर्ष के बेरोजगार युवकों को अनुभव देने के लिए परियोजनाओं के कार्यों पर अंशकालिक नौकरी देकर सहायता। 1945 तक यह समाप्त कर दिया गया।

C- Program for Rural Rehabilitation

अमेरिका में आर्थिक मंदी आने से ग्रामीण स्थिति बिगड़ गई। राज्य सरकार को केन्द्रीय अनुदान लम्बी अवधि के लिए मिलने लगे एवं नए अधिनियम के प्रशासन के लिए – Federal Emergency Relief Administration स्थापित किया गया। इसी थ्मतं ने ग्रामीणों की सहायता की।

अन्तत: अमेरिका में समाज कार्य सदैव सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था के परिवर्तनों से प्रभावित होता रहा है। यहाँ प्राचीन सामन्तवादी समाज पद्धतिके विघटन से लेकर, औद्योगिक समाज व्यवस्था की स्थापना तक, व्यक्ति के समक्ष किसी न किसी प्रकार के अभाव उपस्थित रहे हैं। इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए समाज द्वारा समय–समय पर विभिन्न प्रकार की व्यवस्था की गई। इस प्रकार समाज कार्य, अन्ततोगत्वा, राष्ट्रीय अर्थतंत्र का एक अत्यन्त आवश्यक अंग बन गया। उद्योग तथा नवीन व्यवसायों का ज्यों–ज्यों विकास हो रहा है त्यों–त्यों समाज सेवकों के कार्य क्षेत्र का भी प्रसार हो रहा है।

भारत में समाज कार्य का इतिहास

भारतीय समाज एक परम्परागत समाज रहा है। भारतीय समाज अति प्राचीनकाल में एक प्रकार का साम्यवादी समाज था जिसमें निजी सम्पत्ति का जन्म अभी नहीं हुआ था। निजी सम्पत्ति के जन्म के साथ 'राजा' का भी जन्म हुआ एवं युद्ध से जीती गई सम्पत्ति विजेता की हो गई जिसे वितरित करना उसकी अपनी इच्छा पर था। पीडितों की सहायता करना प्राचीनकाल से भारत की परम्परा रही है। मजूमदार के अनुसार राजा, व्यापारी, जमींदार तथ अन्य सहायता संगठन धर्म के पवित्र कार्य को सम्पन्न करने के लिए एक दूसरे की सहायता करने में आगे बढ़ने का प्रयत्न करते थे।

हडप्पा संस्कृति से लेकर बौद्ध काल तक जनता की भलाई के लिए उपदेश दिए जाते थे।बुद्ध अपने जीवन काल में काफी लोगों को उपदेश दिया करते थे। मौर्यकाल में भी जनता की भलाई के लिए उपदेश दिए गए। अशोक ने

भी कहा कि सहायता के लिए मेरी प्रजा किसी भी समय मुझसे मिल सकती है चाहे मैं अन्तरूपुर में ही क्यों न रहूँ। गुप्तकाल एवं हर्ष के काल में भी इसी प्रकार की व्यवस्थाएँ देखने को मिलती हैं।

भारत में जब मुसलमान आये तो उन्होंने भी अपने धर्म के आदेशानुसार दान–पुण्य पर अधिक धन व्यय किया। इस्लाम में जकात एक महत्वपूर्ण तत्त्व है जिसके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को प्रतिवर्ष अपनी सम्पत्ति, विशेष प्रकार से धन या स्वर्ण, का ढाई प्रतिशत भाग जकात के रूप में व्यय करना आवश्यक है जकात की रकम निर्धन एवं अभावग्रस्त व्यक्तियों पर व्यय की जाती है। इसके अतिरिक्त इस्लाम में एक संस्था खैरात की भी है जिसके अनुसार अभावग्रस्त व्यक्तियों की आर्थिक सहायता व्यक्तिगत रूप से की जाती है। इसके लिये कोई दर निश्चित नहीं है और यह इच्छानुसार दी जाती है। इस्लाम में धन के प्रति घृणा का प्रचार किया गया है और अधिक से अधिक धन को अभावग्रस्त व्यक्तियों में वितरित करने पर बल दिया गया है।

दिल्ली के सुल्तानों ने अपने धर्म के सिद्धांन्तों के अनुसार, जो दान पर अधिक बल देता है, निर्धनों एवं अभावग्रस्त व्यक्तियों पर अधिक धन व्यय किया। जकात द्वारा प्राप्त धन के अतिरिक्त, जो वैधानिक रूप से दान–सम्बन्धी कार्यों के लिए निर्दिष्ट होता था, अन्य साधनों से प्राप्त बड़ी–बड़ी धनराशियाँ निर्धनों पर व्यय की जाती थीं। हजारों नर नारी उसके बनवाए घरों और खेमों में रहते थे और वह स्वयं उनके लिए भोजन परसता था। हिन्दुओं को कच्चा भोजन मिलता था

– महमूद गवान जो एक राज्य का मालिक था अपना सारा धन निर्धनों पर व्यय कर देता था और स्वयं कृषकों वाला साधारण भोजन लेता था और चटाई बिछाकर जमीनपर सोता था। खानकाहें भी निर्धन सहायता का केन्द्र थीं क्योंकि वहाँ भोजन निरूशुल्क मिलता था और अभावग्रस्तों एवं यात्रियों के ठहरने का स्थान मिलता था। राज्य की ओर से या निजी व्यक्तियों की ओर से जो धन उन्हें मिलता था उसका एक बड़ा भाग शिक्षा, समाज सेवा, एवं निर्धन सहायता पर व्यय होता था। यह दान पुण्य इतना विस्तृत था कि इसके कारण व्यावसायिक भिक्षुकों का एक वर्ग उत्पन्न हो गया

– इब्ने बूतता ने एक विभाग के विषय में लिखा है जिसमें अभावग्रस्त पुरूषों एवं स्त्रियों की सूची रखी जाती थी और उन्हें अनाज दिया जाता था। विद्वानों को निरीक्षक नियुक्त किया जाता था ताकि तटस्थ रूप से कार्य हो सके। फिरोजशाह ने अपने कोतवाल को आदेश दे रखा था कि वह वृत्तिहीनों को उसके सामने प्रस्तुत करे– वे उसके सामने प्रस्तुत किये जाते थे और उनके लिए रोजगार उपलब्ध करता था। इस बात में वह सुल्तान गयासुद्दीन तुगलक का अनुसरण करता था जिसके अनुसार अपराध अभाव का परिणाम था। अत: वह निर्धनों के लिए कोई कार्य या व्यवसाय उपलब्ध करता था। वह उन्हें धन या भूमि अनुदान के रूप में देता था जिससे वह कृषि कर सकें। उसने इस बात का प्रयास किया कि भिक्षावृत्ति उसके राज्य से समाप्त हो जाये और इसके लिये वह भिक्षुओं को किसी लाभदायक व्यवसाय ग्रहण करने के लिये तैय्यार करता था।

मुस्लिमकाल में भी शासकों ने इस्लाम के सिद्धान्तों के अनुसार ही समाज की शासन व्यवस्था को संगठित किया। जकात एवं खैरात जैसी इस्लामी अवधारणाओं को सामाजिक मान्यता प्राप्त हुई। असहाय तथा निर्धन व्यक्तियों की सहायता करना इस्लाम धर्म का एक आधारभूत अंग था। फिरोज तुगलक के समय अनेक औषधालयों का निर्माण किया था जहाँ गरीब व्यक्तियों का निरूशुल्क उपचार किया जाता था। अकबर के काल में अनेक समाज सुधार किए गए। अकबर ने दीन इलाही चलाया। दास प्रथा को समाप्त किया एवं यात्री कर तथा जंजिया कर लगाया ताकि कल्याण कार्य किया जा सके। अकबर ने एक आदेश दिया कि यदि कोई विधवा सती न होना चाहे तो उसे बाध्य नहीं किया जाए आदि।

भारत में काफी अधिक समय से पारसी लोग भी रहते हैं। पारसियों के धर्म में भी दान को बड़ा महत्त्व दिया गया है। पारसियों ने यहाँ धर्मशालाएँ, तालाब, कुयें, विद्यालय आदि बनवाए। उन्होंने बहुत से न्यास स्थापित किये जिनमें से एक प्रसिद्ध न्यास बाम्बे पारसी पंचायत ट्रस्ट फन्ड्स है। इन प्रन्यास के उद्देश्यों में पारसी विधवाओं की सहायता,पारसी बालिकाओं की विवाह सम्बन्धी सहायता, नेत्रहीन पारसियों की सहायता, निर्धन पारसियों की सहायता,और धार्मिक शिक्षा सम्बन्धी सहायता सम्मिलित है।

समाज सुधार आन्दोलन

जब अंग्रेज भारत में आये तो क्रिश्चियन मिशनों ने भी यहाँ अपना कार्य आरम्भ किया। क्रिश्चियन मिशनों ने अपने धर्म प्रचार के सम्बन्ध में विभिन्न प्रकार के समाज कल्याण सम्बन्धी कार्य किये।

1780 में बंगाल में सिरामपुर मिशन स्थापित हुआ। इस मिशन ने हिन्दू सामाजिक ढाँचे में सुधार लाने का प्रयास किया। उदाहरण स्वरूप इसे बाल विवाह, बहु विवाह, बालिका हत्या, सती एवं विधवा विवाह पर निषेध के विरूद्ध आवाज उठाई। इसके अतिरिक्त इस मिशन ने जाति प्रथा के विरूद्ध भी प्रचार किया। अपने इन विचारों को क्रियाशील रूप प्रदान करने हेतु इस मिशन ने अनेक समाज कल्याण संस्थायें स्थापित कीं जिनके द्वारा अभावग्रस्त एवं पीडित लोगों की सहायता की जाती थी। उस समय अधिकतर कल्याणकारी संस्थायें क्रिश्चियन मिशनों द्वारा स्थापित की गई थीं। कुछ

समय पश्चात् ही लोक हितैषी व्यक्तियों, अन्य धार्मिक संस्थाओं, एवं राज्य ने इस क्षेत्र में कार्य करना आरम्भ किया। अट्ठारहवीं शताब्दी के अन्त में क्रिश्चियन मिशनों का प्रचार भारत के विचारशील लोगों के लिए एक चुनौती का रूप रखता था। अतरू इस चुनौती का सामना करने के लिए अनेक लोग तैयार हुए। इस प्रकार के एक व्यक्ति राजा राम मोहन राय थे जिन्होंने भारतकी प्रथाओं में सुधार लानेका प्रयास किया। उन्होंने विशेष प्रकार से जाति प्रथा और सती प्रथा का विरोध किया और अनेक शैक्षिक संस्थाओं की स्थापना की। उन्होंनेब्रह्म समाज की स्थापना की जिसका एक उद्देश्य हिन्दुओं को खिश्चियन धर्म स्वीकृत करने से सुरक्षित रखना था। ब्रह्म समाज ने अकाल सहायता,बालिका शिक्षा, स्त्रियों के उत्थान और मद्यनिषेध एवं दान प्रोत्साहन के कार्य किये। ज्योतिबा फूले ने जाति प्रथा के सुधार का प्रयास किया और अनेक संस्थायें उदाहरण स्वरूप अनाथालय एवं बालिका विद्यालय आदि स्थापित किये।

भारत में सामाजिक कार्य की ऐतिहासिक पूष्ठभूमि

भारत में सामाजिक कार्य की लम्बी परम्परा है। विपत्ति के समय व्यक्ति की सहायता का दायित्व बिरादरी और शासक दोनों पर था। सामन्ती युग में भी संगी–साथियों और पड़ोसियों के लिए त्याग और सेवा की मर्यादा स्थापित थी। दानशीलता तथा भ्रातृभावना का बहुत मान था। भगवद्गीता के अनुसार देश, काल और पात्र को देखकर दिया गया दान ही सार्थक दान है। अर्थ, विद्या और अभय, दान के तीन रूप माने गये थे। मन्दिर, धर्मशाला और मठ जैसी संस्थाएँ समाज–सेवा के प्रमुख केन्द्र थे। उनमें निर्धनों को आश्रय तथा भोजन निरूशुल्क देने की व्यवस्था थी। इस प्रकार दान, मानव सेवा और पारस्परिक सहायता को धर्म ने महत्वपूर्ण स्थान दिया था।

हिन्दू युग

कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र में लिखा है कि निर्धन, वृद्ध, निराश्रित और असमर्थ लोगों की देख–रेख का मार राजा पर हैं। आर्थिक दृष्टि से विपन्न व्यक्तियों के लिए कारखानों की स्थापना का भी उल्लेख मिलता है। अशोक के शासनक–काल में ऐसे 'गोपों'की नियुक्ति का उल्लेख मिलता है जो जाति, गोत्र, व्यवसाय, जन्म, मृत्यु, विवाह आदि का लेखा–जोखा रखते थे। गोपों के कार्य सामाजिक कार्यकर्ताओं से बहुत मिलते–जुलते हैं। अकाल के समय राजाओं और सरकारों की और से मुफ्त भोजन और गृहहीनों के लिए आश्रय का प्रबन्ध किया जाता था। संयुक्त परिवार, जाति और ग्राम पंचायत आदि की व्यवस्था ऐसी थी जिसमें समाज के बीमार, वृद्ध, निराश्रित तथा विकलांग सदस्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाती थी।

मुस्लिम काल

मुस्लिम काल में सामाजिक संस्थाओं में परिवर्तन हुआ और जनता के लिए कल्याण सेवाओं की व्यवस्था में राज्य ने भी कुछ अंशों में योगदान किया। इस दिशा में शेरशाह सूरी और अकबर के सुधार–कार्य उल्लेखनीय हैं। उस समय 'जकात'की प्रथा के अन्तर्गत हर व्यक्ति अपनी आय का पांचवाँ हिस्सा दान में देता था। शासन द्वारा इस दान की देख–भाल के लिए व्यवस्था की गयी थी।

ब्रिटिश काल

ब्रिटिश काल में समाज एक ओर तो शिक्षा और आर्थिक परिवर्तन से और दूसरी और ईसाई मिशनरियों की सेवाओं तथा भारतीय सामाजिक एवं धार्मिक सुधारों से प्रभावित हो रहा था। इन सुधारकों ने अस्पृश्यता, सती, प्रथा, बाल विवाह, विधवा विवाह–निषेध आदि अनेक कुरीतियों के उन्मूलन और नारी के समान, अधिकारों की प्राप्ति के लिए प्रयन्त किया। इस सम्बन्ध में राजा राममोहन राय– जिन्होंने ब्रह्मसमाज की स्थापना की, जस्टिस रानाडे जिन्होंने सन् 1870 में विधवा पुनर्विवाह संघ (विडो रीमैरिज एसोसिएशन) की स्थापना की, और सर सैयद अहमद खां, जिन्होंने सन् 1885 में अंजुमन–ए–हिमायत–ए–इस्लाम की नींव डाली, के नाम उल्लेखनीय हैं। इनके अतिरिक्त ईसा की उन्नीसवीं शती के अंतिम चरण में स्वामी दयानन्द सरस्वती ने आर्य समाज की, स्वामी विवेकानन्द ने रामकृष्ण मिशन की और श्रीमती एनी बेसेंट ने थियोसाफिकल सोसायटी की स्थापना की। सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसायटी की स्थापना सन् 1905 में हुई। इन सब संस्थाओं के अतिरिक्त ईसाई मिशनरियों ने देश में अपने सामाजिक और धार्मिक कार्यों का विस्तार जारी रखा।

सन् 1920 में भारतीय रंगमंच पर महात्मा गांधी के अवतरण से सामाजिक सुधारकों और राजनीतिक विद्राहियों के बीच की खाई पट गयी। ऐच्छिक सेवा कार्य की नींव पहले ही पड़ चुकी थी। महात्मा गांधी के नेतृत्व में सेवाग्राम(जिला वर्धा) में 'हरिजन सेवक संघ' तथा 'अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघ' की स्थापना हुई। ये संगठन उनके उस रचनात्मक कार्यक्रम के अंग थे जो जनता की आर्थिक प्रगति और सामाजिक जीवन के सुधार का आंदोलन था।

स्वतंत्रता के पश्चात् कल्याण के क्षेत्र में राज्य का योगदान

स्वतंत्रता के पूर्व समाज कल्याण के क्षेत्र में राज्य का कार्य बहुत सीमित था। केन्द्र अथवा राज्यों में समाज कल्याण सम्बन्धी समस्याओं की देख–रेख करने वाला कोई विभाग न था। देश के बँटवारे के बाद पुनर्वास मंत्रालय की

स्थापना हुई, जिसने पाकिस्तान से आये हुए विस्थापितों के पुनर्वास का कार्य अपने हाथ में लिया। भारतीय संविधान में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के कल्याण का उत्तरदायित्व केन्द्रीय गृह मंत्रालयों को सौंपा गया। अनुसूचित जातियों और जन–जातियों के आयुक्त की भी नियुक्ति की गई। पंच–वर्षीय योजनाओं के अंतर्गत ग्रामीण जीवन के सामाजिक और आर्थिक विकास का एक व्यापक कार्यक्रम हाथ में लिया गया। इस कार्य की देखरेख इस समय,सहकारिता, पंचायती राज तथा सामुदायिक विकास मंत्रालय द्वारा की जा रही है। शिक्षा मंत्रालय ने देहरादून में नेत्रहीनों की शिक्षा और पुनर्वास के लिए दो संस्थाओं की स्थापना की है। श्रमिकों के लिए सामाजिक बीमा एवं कल्याण सेवाओं सम्बन्धी कानून तेजी से बने और फलतरू श्रम मंत्रालय के दायित्व में कई गुना वृद्धि हो गई।

सन् 1953में केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड की स्थापना हुई।इसकी अध्यक्षा समाज कल्याण के क्षेत्र में अग्रगण्य श्रीमती दुर्गाबाई देशमुख नियुक्त की गई। इसके सदस्य तीन क्षेत्रों से लिये गए

(1) ऐच्छिक कल्याण संस्थाएँय

(2) केन्द्रीय सरकार के मंत्रालयय और

(3) संसद।

कल्याण कार्यक्रमों के संचालन में सरकारी और गैर–सरकारी संस्थाओं का सहयोग एक ऐसा प्रयोग था जो अभी तक उन देशों में भी नहीं हुआ था जहाँ लोकतांत्रिक व्यवस्था काफी अरसे से है। इस बोर्ड का एक महत्वपूर्ण कार्य था ऐच्छिक सहायता देना और अछूते क्षेत्रों में नये कार्यक्रम आरम्भ करना तथा कराना। इसी बीच उत्तर प्रदेश, पंजाब, बम्बई, आन्ध्र, हिमाचल प्रदेश,राजस्थान तथा दिल्ली आदि राज्यों में भी समाज कल्याण निदेशालयों की स्थापना हुई। इनका कार्य अपने–अपने राज्यों में कल्याण कार्यों की व्यवस्था करना था। आज लगभग सभी राज्यों में समाज कल्याण निदेशक हैं।

ब्रिटिश युग

ब्रिटिश युग को दो भागों में विभक्त किया जा सकता

1. ईस्ट इण्डिया कम्पनी का शासन,
2. 1857 में ब्रिटिश ताज द्वारा प्रशासन सँभालना।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी का मुख्य उद्देश्य उस द्वारा विजित प्रदेशों को संघटित करना, उनका विस्तार करना एवं कानून तथा व्यवस्था का प्रबन्ध करना था। अतएव, इसने समाज सेवाओं एवं सामाजिक कल्याण उपायों की और कम ध्यान दिया। वारन हेस्टिंग्स ने सर्वप्रथम घोषित किया कि न्याय एवं लोगों के कल्याण को उन्नत करना सरकार का दायित्व है। तदनुसार,उसने 1791में मुसलमानों के लिए कलकत्ता तथा हिन्दुओं के लिए बनारस में महाविद्यालयों की स्थापना की। 1913 के चार्टर अधिनियम ने स्पष्ट तौर पर घोषित किया था कि लोकशिक्षा राज्य का प्राथमिक कर्तव्य है। सर चार्ल्स वुड ने 1854 में भारत को भेजे गये पत्र में राज्य द्वारा आंशिक रूप में प्रबन्धित, विनियमित एवं सहायता प्राप्त पूर्ण आधुनिक शैक्षिक प्रणाली का उल्लेख किया था।

इसी प्रकार, जन स्वास्थ्य भी राज्य का दायित्व स्वीकृत किया गया। अस्पताल जो आरम्भ में यूरोपीयनों के लिए थे, भारतीयों के इलाज के लिए भी स्थापित किये गये। अनेक नगरों की पानी निकाल प्रणाली को सुधारा गया तथा पीने के लिए शुद्ध पानी का भी प्रबन्ध किया गया। इन उपायों को छोड़कर कम्पनी के शासन के दौरान अन्य कोई कल्याणकारी कार्य नहीं किये गये। हाँ, कुछ समाज सुधार सती प्रथा पर प्रतिबन्ध लगाकर एवं विधवाओं को पुनर्विवाह की अनुमति देकर क्रमशरू 1829 एवं 1856 में पारित अधिनियमों द्वारा किये गये।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी द्वारा 1857 में ब्रिटिश ताज को शक्ति हस्तान्तरण के पश्चात् लोक कल्याण कार्यों को समाज सेवाओं, समाज सुधार,सामाजिक विधान,सामाजिक सुरक्षा एवं समाज कल्याण में वर्गीकृत किया जा सकता है जिनका विवरण निम्नलिखित है –

समाज सुधार

ब्रिटिश सरकार भारतीय समाज में प्रचलित सामाजिक कुरीतियों यथा बाल–विवाह, दहेज प्रथा,महिलाओं को उत्तराधिकार से वंचित रखना, अनुसूचित जातियों के मन्दिर में प्रवेश की मनाही आदि से परिचित थी। अतएव इसने समाज को इन कुरीतियों से मुक्त करने के लिए अधिनियम बनाये जैसे सहमति आय, कानून जिसके द्वारा नवयुवतियों की आयु 10 से 12वर्ष तक कर दी गई जो बाद में शारदा कानून 1929 द्वारा तथा दूसरे कानूनों द्वारा और बढ़ा दी गयी–यह आयु सीमा महिलाओं के उत्तराधिकार अधिकारों, गोद लेना, कानून के सम्मुख विवाह, न्यायिक पृथकीकरण एवं विवाह विच्छेद, बालिकाओं का मन्दिर को अर्पण आदि विषयों में लागू होती थी।

यह उल्लेख किया जा सकता है कि इस काल के दौरान समाज सुधार प्रयासों एवं अधिनियम को देशीय समाज सुधारकों जिनमें ब्रिटेन में प्राप्त उद्धार शिक्षा का प्रभाव था, संगठनों यथा आर्य समाज, रामकृष्ण मिशन, ईसाई प्रचारकों, ब्रिटेन में कल्याण–कारी गतिविधियों के विकास तथा अन्तिम स्वतंत्रता आंदोलन के नेताओं प्रमुखतया महात्मा गांधी के कारण संवेग प्राप्त हुआ था।

सामाजिक सुरक्षा

औद्योगीकरण के आगमन से श्रमिकों के लिये दुर्घटना, मृत्यु, वृद्धायु, बेरोजगारी आदि से जनित अयोग्यता के कारण क्षतिपूर्ति, कार्य समय के नियमन, कार्य करने की संतोषजनक दशा, औद्योगिक सुरक्षा आदि के रूप में सामाजिक सुरक्षा की व्यवस्था की आवश्यकता अनुभव की गई। प्रथम विश्वयुद्ध के बाद श्रमिक संगठनों,मजदूर संघों में नेताओं, समाज सुधारकों, प्रगतिशील नियोक्ताओं एवं अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठनों ने श्रमिक कल्याण हेतु समुचित सामाजिक सुरक्षा उपाय उठाने के लिये कहा। परिणामस्वरूप, भारत सरकार ने श्रम कल्याण हेतु विभिन्न अधिनियम यथा फैक्टरी कानून 1922,श्रमिक क्षतिपूर्ति कानून 1923, भारतीय ट्रेड यूनियन अधिनियम 1926, व्यापार विवाद कानून पारित किये। इसी प्रकार राज्य सरकारों ने स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व प्रसूति लाभ अधिनियम पारित किये।

समाज कल्याण

ब्रिटिश सरकार ने समाज के अलाभान्वित एवं अव–विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग, यथा अनुसूचित जातियों, अनुसूचित कबीलों एवं पिछड़ी जातियों के लिये समाज कल्याण लाभ देने की दिशा में कोई महत्वपूर्ण कार्य नहीं किया, केवल उनके लिये शैक्षिक सुविधाओं की व्यवस्था की और यह भी काफी देर बाद 1944 में जब केन्द्रीय सरकार ने पिछड़ी जातियों की शिक्षा के लिये विशेष व्यवस्था की। देशी रियासतों, जैसे ट्रांवनकोर, कोचीन, मैसूर एवं बड़ौदा ने पिछड़े वर्गों के उत्थान हेतु समाज कल्याण उपायों,निरूशुल्क शिक्षा–पुस्तकों एवं भरण–पोषण भत्तासहित की व्यवस्था द्वारा– को आरम्भ किया। समाज के अन्य वंचित वर्गों और अशक्तों की, आर्थिक दशा को सुधारने की ओर कोई ध्यान नहीं दिया गया।

समाज कल्याण के उपायों को ऊपर लिखित रूपों में प्रदान करने के लिए सरकार विभिन्न कारकों से प्रभावित हुई, यथा औद्योगीकरण के दोष विशेषतया श्रमिकों का शोषण, नगरीकरण जिससे संयुक्त परिवार टूटे और गंदगी, अस्वच्छता, अस्वास्थ्यकर दशाओं एवं प्रदूषण का जन्म हुआ, बेरोजगारी, सामाजिक एवं आर्थिक अन्याय, दो महायुद्धों से उत्पन्न विनाश एवं इससे प्रभावित लोगों,को पुनर्वास, तीसरे दशक की मंदी, श्रमिक संगठनों द्वारा अपने अधिकारों का बोध कर्मचारियों के प्रति नियोक्ताओं के दायित्व, शक्तिशाली ट्रेड यूनियन आंदोलन का जन्म, एवं उनका नेतृत्व, पाश्चात्य शिक्षा के माध्यम से प्राप्त उदारवाद की भावना, समाज सुधारकों के सतत् प्रयास तथा उनके द्वारा लोगों को उनके अधिकारों के प्रति जागृत करना,जन–शिक्षा, निर्धनों एवं वंचितों को राहत आवश्यकताओं की पूर्ति करने में स्वैच्छिक संगठनों की अपर्याप्तता,राजनीतिक विचारधाराओं का प्रभाव, उदार प्रजातंत्रों द्वारा यह मान्यता कि कल्याणवाद साम्यवाद के प्रसार को रोक सकेगा,लोगों द्वारा विश्वास कि राज्य द्वारा चालित समाज कल्याण नीति एवं कार्यक्रम उनकी कुशलक्षेम के अनिवार्य तत्व है, राज्य द्वारा स्पष्ट तौर पर समझ लेना कि उसके लोगों की समृद्धि एवं संतुष्टि इसकी शक्ति में वृद्धि करेगी तथा अन्तिम स्वयं ब्रिटेन में कल्याणकारी राज्य की स्थापना।

–व्यक्ति के समस्त मानव व्यवहार जैविकीय अवयव तथा उसके पर्यावरण के बीच अन्तरूक्रिया का परिणाम है। समाज कार्य मानव व्यक्तित्व को एक यूनिट के रूप में स्वीकार करता है जो जटिल रूप से विभिन्न अवयवों का मिश्रण है। उसका कोई व्यवहार किसी एक अवयव के कारण नहीं घटित होता है। यहं उसके प्रकृति अनुभव संस्कृति का सम्मिलित परिणाम है। यह भी संज्ञान में रखना चाहिए कि मानव का चयन हमेशा मनोवैज्ञानिक, भौतिक, आर्थिक सामाजिक तथा अन्य तत्वों को ध्यान में करके किया जाता है।

–मानव में वैयक्तिक तथा सामाजिक दोनों आवश्यकताएँ होती है जिनकी पूर्ति समाज से करनी होती है। इस प्रकार मानवता पूर्ण विकास समाज के साथ समायोजन से ही हो सकता है क्योंकि वह समाज पर निर्भर है।यदि वह आवश्यकताएँ पूरी नहीं होतीं तो मानव को पीड़ा की अनुभूति होती है। समाज कार्य इस समाज के सामंजस्य को पूर्ण करने में मदद कर उसको कम करने का प्रयास करता है।

–व्यक्ति सम्भवत विवेकपूर्ण कार्य नहीं करता।

2. समूहों, व्यक्तियों, एवं समूहों और व्यक्तियों के परस्पर सम्बंधों के सन्दर्भ में

– समाज कार्य हस्तक्षेप न करने की नीति, सबसे उपयुक्त को जीवित रहने के सिद्धान्त को नहीं मानता है क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति का अपना महत्व है तथा यह आवश्यक नहीं कि धनी तथा शक्तिशाली व्यक्ति ही योग्य हो तथा निर्धन तथा दुर्बल अयोग्य हो।

– इसलिए समाज का यह मुख्य दायित्व है कि वह प्रत्येक व्यक्ति को पूर्ण अवसर दे ताकि वह अपने वातावरण के साथ अच्छे ढंग से व्यवहार कर सके।

– इसलिए सामाजिक सेवाओं पर समुदाय के सभी वर्गों का समान अधिकार है। समुदाय का उत्तरदायित्व है कि वह बिना भेदभाव के अपने सभी सदस्यों की कठिनाइयों का निराकरण करें। बिना प्रजातांत्रिक भेदभाव के सम्पूर्ण सहयोग होना चाहिए।

– जन सहायता आवश्यकता की अवधारणा पर आधारित होनी चाहिए।

– यदि किसी व्यक्ति समूह समुदाय को सुविधा दी जाती है तो उससे दूसरों के सुरक्षा को खतरा नहीं होना चाहिए।

– केन्द्रीय सरकार का यह उत्तरदायित्व है कि वह स्वास्थ्य, आवास, पूर्ण रोजगार, शिक्षा तथा अन्य विविध प्रकार से जन कल्याण एवं सामाजिक बीमा योजना सम्बंधी कार्यक्रमों

3. समाजकार्य की प्रणालियों एवं कार्यों के संदर्भ में –

–समाज कार्य का कार्यात्मक रूप द्विमुखी है यह दो प्रणालियाँ अपनाता है। इसके एक छोर पर वैयक्तिक सेवाकार्य है तो दूसरे छोर पर सामाजिक क्रिया। एक तर फ वह वैयक्तिक सेवा कार्य का प्रयोग कर वह व्यक्ति को सामाजिक ढाँचे में समायोजन करने के लिए सहायता करता है तो दूसरी तर फ वह सामाजिक क्रिया के द्वारा वह व्यक्ति के लिए सामाजिक ढाँचे को बदलता है जो समाज एवं व्यक्ति के अनुकूल हो। सामुदायिक संगठन, सामूहिक सेवा कार्य तृतीय शक्ति के रूप में इन दोनों ध्रुवों के बीच कार्य करते हैं।

– यह प्रणालियों मानव व्यवहार का वैज्ञानिक पद्धति से अध्ययन करके उसके व्यवहार में सुधार द्वारा या सामाजिक विकास के लिये वातावरण के परिवर्तन एवं अन्तदृष्टि के विकास द्वारा समस्या का निराकरण करती है। यह आदेश, निर्णय एवं प्रबोधन में विश्वास नहीं करता है।

–समाजकार्य जनतंत्र को एक प्रणाली के रूप में अपनाता है। समाजकार्य के एक महत्वपूर्ण घटक के रूप में जनतंत्र को अपनाया जाता है। समाजकार्य का यह दायित्व है कि वह प्रत्येक कार्य के दौरान प्रजातंत्र के मूल्यों को प्रयोग करे। व्यावसायिक सेवा कार्य में व्यक्ति का महत्व, समायोजन आत्म विकास तथा व्यक्त करने की क्षमता होती है।

1. समाज कार्य की वैश्विक परिभाषा" । इंटरनेशनल फेडरेशन ऑफ सोशल वर्कर्स ।
2. शर्मा, कल्पना (6 अगस्त, 2004)। "सेंसर बोर्ड ने 'अंतिम समाधान' पर रोक लगाई" "। द हिंदू ।
3. थारा, आर.; पद्मावती, आर.; श्रीनिवासन, टीएन (अप्रैल 2004)। "भारत में मनोरोग पर ध्यान दें" । मनश्चिकित्सा के ब्रिटिश जर्नल । 184 (4): 366–373। डीओआई : 10.1192/बीजेपी.184.4.366 । पीएमआईडी 15104094 ।
4. निज़ामी, एस. हक; गोयल, निशांत; हक, मोहम्मद जियाउल; अख्तर, सईद (2008). "केंद्रीय मनश्चिकित्सा संस्थान: उत्कृष्टता में एक परंपरा" । इंडियन जर्नल ऑफ साइकाइट्री । 50 (2): 144-148। डीओआई : 10.4103/0019-5545.42405 . पीएमसी 2738340 । पीएमआईडी 19742219 ।
5. डॉ रत्रा वर्मा, भारत में मनश्चिकित्सीय सामाजिक कार्य [पूर्ण उद्धरण वांछित]